इकाई 14 सामाजिक लिंग सोच (जेंडर) पहचान का बनना

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ लेने के बाद आप:

- निजी-व्यक्तित्व, देह, पहचान इत्यादि धारणाओं के विकास को समझ सकेंगे; और
- समाजीकरण-धर्म, शिक्षा, संस्कृति, जन-संचार माध्यम सामाजिक लिंग सोच जन्य पहचान की रचना को किस तरह से प्रभावित करते हैं, यह जान सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

सामाजिक-लिंग सोच (जेंडर) लिंग की जीव-वैज्ञानिक धारणा से एकदम भिन्न है। सामाजिक लिंग-सोच की रचना की जाती है जिसकी अभिव्यक्ति सामाजिक जीवन के कई क्षेत्रों में होती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि स्त्री और पुरुष में कुछ विशेष शारीरिक भेद मौजूद रहते हैं। ये जैविकीय भेद दोनों में व्यवहार-संबंधी भेदों को भी जन्म देते हैं या नहीं और इस प्रकार जैविक लिंग भूमिकाओं और सामाजिक लिंग सोच जन्य स्तरीकरण का एक कारण है या नहीं, यह समाजशास्त्रियों में बहस का मुद्दा रहा है। जैविक नियतिवाद का मानना है कि जैविकी इन बातों को प्रभावित करती है। लेकिन समाजशास्त्री इस विरोध में तर्क देते हैं उदाहरण के लिए, जन्म से ही मादा शिशु को नर शिशु से एकदम भिन्न तरीके से लिया जाता है। शोध अध्ययनों से पता चलता है कि बच्चे का जन्म होते ही इस धारणा पर ही बल दिया जाता है कि स्त्री पुरुष से निम्न है। फिर समाज द्वारा लड़कियों और महिलाओं के लिए निर्दिष्ट आचार संहिताएं इस धारणा को मजबूत बनाती है। इसलिए समाजशास्त्री कहते हैं कि सामाजिक-लिंग सोच जन्य भेदभाव और भूमिकाएं काफी हद तक समाज ही थोपता है।

14.2 सामाजिक नियंत्रण के माध्यम के रूप में देह

आइए अब देह और उसकी संकल्पना पर आते हैं।

14.2.1 देह की धारणा

देह स्पष्टतः संस्कृति का माध्यम है। हम अपने देह की देखभाल करते हैं और उसे चुस्त दुरुस्त बनाए रखते हैं, सजते संवरते हैं, अन्य लोगों से बातचीत करते हैं। मगर द्रेह संस्कृति का सिर्फ तानाबाना ही नहीं है। बल्कि.यह "सामाजिक नियंत्रण का आधार" भी है। इसलिए हम जैसा चाहते हैं वैसा नहीं बन पाते। बल्कि हमारा रूप हमारा व्यक्तित्व संस्कृति के जरिए ही बनता है। हमारे इसी रूप को फॉलकॉल्ट "विनेय देह" की संज्ञा देते हैं जिसे सांस्कृतिक जीवन के आदर्श नियमित करते हैं।

भारत के संदर्भ में देह पर एक महत्वपूर्ण कृति डेविड आरनल्डि द्वारा रचित *कोलोनाइजिंग द बॉडी* (देह का औपनिवेशीकरण) है। आर्नल्ड कहते हैं कि देह औपनिवेशिक शक्ति के लिए उपनिवेश स्थल तो है ही, यह उपनिवेश बनने वाले और उपनिवेश बनाने वाले राष्ट्रों के बीच संघर्ष का मैदान भी है।

14.2.2 देह की समाजशास्त्रीय व्याख्या

मानव-विज्ञानियों और समाजशास्त्रियों ने नारी देह के विशिष्ट स्वरूप की व्याख्या जाति, धार्मिक विश्वास, सामाजिक नियमों और प्रथाओं की रोशनी में की है और यह बताया है कि नारी के देह रूप और उसकी लैंगिकता किस तरह सामाजिक मर्यादा या सीमा के महत्वपूर्ण चिन्हकों का काम करते हैं। यह एक निर्विवाद सत्य है कि नारी की लैंगिकता को जाति और वर्गीय कारक नियंत्रित करते हैं। नारी की देह और उसकी लैंगिकता पुरुष के नियंत्रण क्षेत्र में रहती है। यह सिर्फ पितृसत्तात्मक शक्ति का ही नहीं बल्कि सामाजिक नियंत्रण का आग्रह भी है। स्त्री को अपनी लैंगिकता की एक स्वतंत्र, स्वगमित व्याख्या या उसकी अभिव्यक्ति करने की अनुमति नहीं होती। उसकी देह जाति, वर्ग और सामुदायिक आन की अभिव्यक्ति का माध्यम और प्रतीक बन जाती है। शुचिता, पवित्रता और शुद्धता का महिमामंडन कुल, संप्रदाय और राष्ट्र की आन स्त्रियोचित गुणों के रूप में किया जाता है। एक तरह से नारी की देह उसकी नहीं रहती बल्कि समाज में अपनी छवि को प्रतिष्ठापित करने और उसे वैध बनाने के लिए समुदाय विशेष उस पर अपना अधिकार समझता है। इस समुदाय में स्त्री और पुरुष दोनों ही शामिल रहते हैं।

नारी देह वह आधार है जिस पर लिंग समानता बनती है, स्थापित होती है और उसे वैधता मिलती है इसलिए नारी देह को विभिन्न संदर्भों, परिवेशों और परिस्थितियों में समझना जरूरी है।

14.2.3 संप्रेषणीय देह

नारी की देह को जब हम संप्रेषणशील या जिए जाने वाली काया के रूप में देखते हैं तभी हम जिए-जाने वाले अनुभव की सामाजिक प्रस्थापना के निहितार्थों को समझ सकते हैं। इसके साथ-साथ अपने देहरूप और उसकी अभिव्यक्ति को लेकर महिलाओं की अपनी जो समझ है उसे भी हम जाने सकते हैं। सामाजिक लिंग सोच की छाप महिलाओं पर उनके दैनिक जीवन में सामाजिक रूप से और उनके जीवन अनुभवों, बोध, आकांक्षाओं, फंतासियो के जरिए बनी रहती है। इस तरह लिंग पहचान इस मायने में विरचित और अनुभूत दोनों है।

नारी की पहचान के मूल में नारी देह के निरूपण का अंत:करण है।

बोध प्रश्न 1

1) देह की समाजशास्त्रीय धारणा उसकी जीव-वैज्ञानिक धारणा से किस तरह से भिन्न है? आठ पंक्तियों में बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

14.3 लिंग-पहचान को जन्म देने वाले कारक

आइए अब देखते हैं कि समाजीकरण किस तरह लिंग पहचान को प्रभावित करता है।

14.3.1 समाजीकरण

समाजीकरण व्यक्ति द्वारा अपनी संस्कृति के अनुकूल ढलने के लिए समाज के मूल्यों का अंत:करण करने, उनका और उन्हें आत्मसात करने की प्रक्रिया है। जो तय करती है कि समाज में पुरुष और स्त्रियां किस तरह आचरण करें।

एक ओर सभी महिलाएं रजोधर्म, संतानोत्पत्ति और शिशुओं के लालन-पालन, रजोनिवृत्ति के अनुभवों से गुजरती हैं, जो पुरुषों के साथ नहीं होता। वहीं दूसरी ओर सभी स्त्री-पुरुष ऐसे सांस्कृतिक परिवेश में रहते हैं जो देहरूप के अनुभव को उनके वर्ग, जातीय, धार्मिक और जातिगत कारकों के अनुसार अलग-अलग स्वरूप प्रदान करता है। इसलिए दैनिक जीवन में देहरूप के अनुभव के लिए ये सामाजिक-स्थानिक और अन्य ऐतिहासिक कारक महत्वपूर्ण हैं।

विभिन्न संस्कृतियों में प्रचलित समाजीकरण के चलन कन्याओं के पालन-पोषण में बरती जाने वाली तत्परता और चिंता को दर्शाते हैं। इससे हम सामाजिक नियमों, मूल्यों और प्रथाओं के अनुसार आचरण करने की सीख मिलती है। कालांतर में इस प्रक्रिया में महिलाएं सामाजिक अपेक्षाओं को इस तरह से आत्मसात कर लेती हैं कि वे उन्हें अपना अनुभव मानने लग जाता है। जिससे सत्ताधिकार उन पर बलात् काम नहीं करता बल्कि वह उन्हीं के भीतर काम करने लगता है।

समाजशास्त्रियों का मानना है कि समाजीकरण की जिस प्रक्रिया से लोग यह सीखते हैं कि उनके अभिभावक, संगी-साथी और वृहत्तर समाज उनसे क्या अपेक्षा करता है, वही प्रक्रिया स्त्री और पुरुष को अपने लिंग के अनुसार आचरण के नियम सिखाती है।

सामाजिक लिंग सोच जन्य समाजीकरण: सामाजिक अधिगम की जो प्रक्रिया लोगों विशेषकर युवाओं में अपनी संस्कृति के विभिन्न पहलुओं की समझ पैदा करती है उसमें सामाजिक लिंग सोच जन्य समाजीकरण की प्रक्रिया भी आती है। लिंग-जन्य समाजीकरण की इस प्रक्रिया में समाज में प्रचलित सामाजिक लिंग सोच जन्य भूमिकाएं और उनके लाभ व सीमाओं को सीखने की प्रक्रिया आती है। अधिकतर समाजों में पुरुष या स्त्री का स्पष्ट श्रेणीकरण होता है कि स्त्री या पुरुष होने में क्या होता है। श्रेणीकरण की यह प्रक्रिया और सामाजिक लिंग सोच जन्य भूमिकाओं के ज्ञान को संचारित करने वाले समाजीकरण के कारक यह तय करते हैं कि व्यक्ति खुद को और अन्य लोगों को सामाजिक लिंग सोच और लिंग भूमिकाओं के आधार पर किस तरह व्याख्या करते हैं।

कई समाजों में सामाजिक लिंग सोच जन्य भूमिकाएं, जिनका अभिप्राय प्रत्येक लिंग के लोगों के लिए आचरण के अपेक्षित तौर-तरीकों से है, बड़ी कठोरता से परिभाषित रहती हैं। उदाहरण के लिए पुरुषों से यह अपेक्षा करने की परंपरा रही है कि वे बलवान, आक्रामक और यहां तक की हावी रहने वाले हों। इसी प्रकार "लड़के रोते नहीं", यह जुमला पुरुष की भूमिका के पहलू को दर्शाता है। लेकिन महिलाओं से अपेक्षा की जाती है कि उनमें ममता, पालन-पोषण करने की भावना हो, वे संवेदनशील और अपेक्षत्या सहनशील हों। बच्चों को उनकी शैशवास्था से ही सचेतन या अवचेतन रूप से इन मूल्यों को सिखाया जाता है। उदाहरण के लिए दोनों के लिए खिलौने भी अलग-अलग बनाए जाते हैं। लड़कों को बड़े, शोरगुल करने वाले या हिंसक किस्म के खिलौने दिए जाते हैं, लेकिन लड़कियों को हल्के फुल्के खिलौने दिए जाते हैं। इन्हें अभिव्यक्तियां से निजी-व्यक्तित्व की पहचान बनती है।

बालपन से ही होती है लिंगीय पहचान
साभार : किरणमई बुसी

सामाजिक लिंग सोच जन्य समाजीकरण के वाहक: माता-पिता, भाई-बहन, संगी-साथी, विद्यालय, समाज, धर्म और अन्य संस्थाएं समाजीकरण के वाहक का काम करते हैं। छोट-छोटे बच्चों के लिंग-जन्य समाजीकरण में मुख्य भूमिका उनके माता-पिता दादी-दादा सहित परिवार के अन्य सदस्य निभाते हैं। इसे वही तय करते हैं कि परिवार लड़के के साथ किस तरह का व्यवहार करे और बच्चे को किस तरह के खिलौने और कपड़े दिए जाएं।

लिंग पहचान दो वर्ष के भीतर ही स्थापित हो जाती है जिसके केन्द्र में "मैं मर्द हूं" या "मैं औरत हूं" यह धारणा होती है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक सिगमंड फ्रायड के सिद्धांत के अनुसार सम-लिंगी अभिभावकों (माता-पिता) के साथ तादात्म बनाने और उनके अनुकरण करने से लिंग-पहचान प्रभावशाली तरीके से बनती है। फ्रायड जिस प्रछन्न या अव्यक्त काल (सात से लेकर बारह वर्ष की आयु) की बात करते हैं उसी दौरान स्त्री और पुरुष अपने को एक दूसरे से पृथक करने लग जाते हैं। इसे हम समाजीकरण की प्रक्रिया का ही हिस्सा मान सकते है और यह सामाजिक-लिंग सोच जन्य अभिज्ञान और भूमिका विशिष्ट आचरण को ठोस आकार देती है। किशोरावस्था में स्कूल और परिवार लिंग समाजीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। किशोरावस्था के दौरान संगी-साथियों का प्रभाव लिंग समाजीकरण के सबसे शक्तिशाली कारक के रूप में काम करता है क्योंकि किशोर आपस में छोटे-छोटे सामाजिक समूह बनाते हैं जो वयस्क जीवन और वृहत्तर समाज में उनके संक्रमण को आसान बनाता है। जन संचार माध्यम भी किशोरावस्था में समाजीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं।

सामाजिक लिंग सोच जन्य पहचान और समाजीकरण व्यक्ति के आत्म-सम्मान के बोध पर गंभीर प्रभाव डाल सकते हैं।

14.3.2 संस्कृति

परंपरागत रूप से संस्कृति को लिंग पहचान के निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण माना गया है। समाजीकरण का सिद्धांत विस्तारपूर्वक बताता है कि लड़के और लड़कियों से किस तरह शैशवावस्था से ही अलग-अलग तरीके से व्यवहार किया जाता है। इसी के फलस्वरूप वे सामाजिक-मनोवैज्ञानिक विशेषताएं लेकर बड़े होते हैं। शिक्षा को इस प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग माना गया है, जो लड़कों और लड़कियों को अलग-अलग क्रिया-कलापों और उपलब्धियों की ओर खींचती है। सामाजिक लिंग सोच (जेंडर) और संस्कृति का जो नवीनतम विश्लेषण किया गया है वह मुख्यत: साहित्यक सिद्धांत पर आधारित है जिसमें मुख्य डेरिडा (1967) का विसंरचनावाद और मिशेल फॉकोल्ट का संवाद विश्लेषण है इसमें व्यक्तिगत अधिगम अनुभव के बजाए पाठों या निरूपण या संवाद/परिचर्चाओं के सृजन पर अधिक जोर दिया गया है, जिनसे हममें सामाजिक-लिंग सोच जन्य धारणाओं की रचना होती है (वीडन, 1987) इस अध्ययन में न सिर्फ स्त्री और पुरुष के बीच विद्यमान भेदों बल्कि स्त्रियों के बीच में मौजूद भेदों भी बात की गई है। असल में स्त्रियों के बीच विद्यमान भेदों को इस तरह जो महत्ता दी गई है उसने इस धारणा को ही उलझा के रख दिया है कि महिलाएं एकात्मक श्रेणी हैं।

भारत में स्त्री को दोहरे रूप में दर्शाया गया है। स्त्री को मिथक और जन-संस्कृति में देवी और विध्वंसक शक्ति, धर्म-परायण पत्नी और अनिष्टकारी, देहरूप से पवित्र और अपवित्र दोनों तरह से बताया गया है। स्त्रियों की पूजा और उनका आदर ही नहीं किया जाता बल्कि उसकी लैंगिकता को सीधे नियमित करके उसे नियंत्रण में भी रखा जाता है।

14.3.3 धर्म

किसी भी समाज में धर्म को लेकर स्त्री और पुरुषों का अनुभव एक जैसा नहीं होता। धर्म एक शक्तिशाली सामाजिक संस्था है जो समाज में सामाजिक लिंग सोच जन्य पहचान को बनाती है। इसमें ऐसे पवित्र स्थान हैं जिसमें प्रवेश की अनुमति सिर्फ पुरुषों को ही होती है, महिलाओं को नहीं। इसी प्रकार इसमें ऐसे नियम हैं जिनके अनुसार धार्मिक कृत्यों में कुछ कर्तव्यों या दायित्वों को सिर्फ पुरुष ही पूरा कर सकते हैं। इस तरह धर्म सिर्फ यही नहीं बताता है कि विभिन्न धार्मिक कृत्यों में पुरुष और स्त्रियां किस तरह भाग लें बल्कि समाज में पुरुष और स्त्री को जो सामाजिक लिंग सोच जन्य भूमिकाएं सौंपी जाती हैं उन्हें भी वह प्रबल बनाता है और उन्हें वैधता का जामा पहनाता है।

14.3.4 शिक्षा

औपचारिक शिक्षा सामाजिक लिंग सोच जन्य भूमिकाओं में दीक्षा देता है जिससे निजी-व्यक्तित्व धीरे-धीरे विकसित होता है और लिंग पहचान को प्रभावित करता है। स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में जो अनेक आदर्श (रोल मॉडल) और अनुकरणीय उदाहरण बताए जाते हैं, वे सामाजिक लिंग सोच (जेंडर) जन्य पहचान के निर्माण में मुख्य भूमिका निभाते हैं। एक सामाजिक संस्था के रूप में शिक्षा को समाजशास्त्री सामाजिक लिंग सोच जन्य समाजीकरण प्रक्रिया और सामाजिक लिंग सोच (जेंडर) का रूढ़िप्रकरण से जोंड़कर देखते हैं।

14.3.5 संचार माध्यम

हमारा जीवन किसी न किसी तरीके से संचार और उसके माध्यमों से संप्रेषित होने वाली छवि से प्रभावित होती है। दृश्य और प्रकाशन माध्यम (टेलीविजन, समाचार पत्र-पत्रिकाएं इत्यादि) नारी देह की छवि को एक 'पूर्ण' या 'वांछनीय' देह के रूप में प्रस्तुत करके महिलाओं के सोच को प्रभावित करते हैं। आधुनिक शहरी भारत में टेलीविजन और पत्र-पत्रिकाओं के बढ़ते प्रभाव के चलते नारीतव के नियम

सांस्कृतिक रूप से अब 'मानकीकृत दृश्य छवि' के माध्यम से ही संचारित हो रहे हैं। इससे हम सीधे दैहिक संवाद से यानी छवियों के नियमों को सीखते हैं जो हमे यह बताती हैं कि समाज में किस तरह की वेशभूषा, देहाकार, मुखाकृति, चाल-ढाल और आचरण जरूरी है। इस तरह की छवियां विज्ञापनों, फैशन शो, सौंदर्य प्रतियोगिताओं, फैशन मॉडलों, पत्र-पत्रिकाओं विशेषकर महिलाओं की पत्रिकाओं से हमें प्रस्तुत की जाती हैं। केबल टीवी हमारे घरों में विज्ञापनों, फिल्मों, टॉक शो इत्यादि के जरिए 'पूर्ण नारी देह' की पश्चिमी मनोग्रस्ति को भी ले आया है। इससे प्रसारित होने वाले संदेश प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से नारी देह को ही संबोधित करते हैं।

14.3.6 भाषा

सामाजिक लिंग सोच जन्य पहचान मौखिक और अमौखिक दोनों माध्यमों से प्रेरित होती है और बनती है। कुछ समय से समाजशास्त्र में इस बात के अध्ययन पर रुचि ली जा रही है कि भाषा की अर्थ संरचना से सामाजिक लिंग सोच जन्य वर्गीकरण किस तरह से प्रभावित होता है। लैकॉफ (1975) के अनुसार भाषा में प्रचलित सामान्य जातीय शब्द संज्ञानात्मक संरचना और लिंग (जेंडर) के प्रति दृष्टिकोण को प्रभावित करते हैं। सामान्य शब्द पुरुष वर्चस्व और श्रेष्ठता के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण को दर्शाते हैं और उसे जारी रखते हैं। उदाहरण के लिए 'आदमी' शब्द सामान्य अर्थ में सभी मनुष्यों के लिए प्रयुक्त होता है, जबकि 'स्त्री' शब्द सिर्फ महिलाओं के लिए प्रयोग होता है। इसी प्रकार अविवाहित (बैचलर) शब्द आज भी अकेले अनब्याहे व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होने वाले मूल अर्थ को बरकरार रखे हुए है। लेकिन अविवाहिता (स्पिनस्टर) शब्द ने अब "उम्रदार अनब्याही महिला" जैसा नकारात्मक अर्थ ग्रहण कर लिया है। इस प्रकार भाषा भी एक ऐसा माध्यम है जिसके जरिए सामाजिक लिंग सोच जन्य पहचान थोपी जाती है या उसे मजबूत बनाया जाता है।

14.3.7 सामाजिक परिवेश

दैनिक जीवन में महिला को अपने देहरूप को लेकर जो अनुभव होता है वह निसंदेह विभिन्न परिवेशों और परिप्रेक्ष्यों में उसकी स्थिति से जुड़ा होता है चाहे वह संप्रदाय हो या परिवार या फिर कार्यस्थल या अन्य स्थान जहां वह रहती हो, काम करती हो या आती-जाती हो। असल में लिंग पहचान के निर्माण की मुख्य धुरी यही है।

बोध प्रश्न 2

1) समाजीकरण के वाहक कौन हैं

   (a) परिवार; (b) विश्वविद्यालय; (c) पुस्तकालय; (d) संगी साथी समूह

   1) सिर्फ a

   2) सिर्फ b

   3) सिर्फ c

   4) सिर्फ d

   5) सभी

2) सिगमंड फ्रायड के अनुसार लिंग पहचान किस उम्र में स्थापित हो जाती है?

   1) 18 वर्ष

   2) 25 वर्ष

   3) 30 वर्ष

   4) 2 वर्ष

3) संचार माध्यम लिंग पहचान के निर्माण को किस तरह से प्रभावित करते हैं? पांच पंक्तियां में बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

14.4 सारांश

स्त्री की रचना असल में समाज ने की है और उससे जो सामाजिक-लिंग सोच उपजी है वही रोजमर्रा की दुनिया में नारी के देहरूप के स्वभाव को समझने में मुख्य है। ऐसा नहीं है कि सामाजिक लिंग सोच और पहचान स्थायी और अपरिवर्तनीय हो। यह रचित और अनुभूतिपरक दोनों ही है। कभी-कभी इसे पार भी किया जा सकता है। इसलिए यह संप्रेषण और विनिमय की प्रक्रिया के दौरान निरंतर बनने वाली चीज है, जो स्त्रियों के रोजाना के जीवन अनुभवों के माध्यम से विकसित होती है।

14.5 शब्दावली

सामाजिक लिंग सोच (जेंडर) : 'सेक्स' या लिंग का अभिप्राय स्त्री और पुरुष की जैविक विशेषताओं से होता है। लेकिन सामाजिक लिंग सोच को एक सामाजिक रचना माना जाता है, जिसमें व्यक्तित्व संबंधी सभी विशेषताएं, मूल्य, आचरण और वे सभी क्रिया-कलाप आते हैं जिन्हें समाज पुरुषों और महिलाओं को अलग-अलग तरीके से सौंपता है।

सामाजिक लिंग सोच: नर या मादा होने का बोध जो प्राय: दो वर्ष की उम्र तक जन्य पहचान हो जाता है।

सामाजिक लिंग सोच: सामाजिक लिंग सोच जन्य (जेंडर) भूमिकाओं का सामाजिक जन्य समाजीकरण और पारिवारिक अपेक्षाओं और इन भूमिकाओं का अन्य लोगों द्वारा निर्वाह करके उन्हें अंगीकार करना।

सामाजिक नियंत्रण : इसे मानव समाज में प्रचलित नियमों और प्रथाओं के पालन के लिए प्रयोग किए जाने वाले सभी प्रकार के बलों और अंकुशों के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

समाजीकरण : अपनी संस्कृति के अनुकूल ढलने के लिए समाज के मूल्यों के आत्मसातीकरण या अंत:करण की प्रक्रिया जो यह तय करती है कि समाज में स्त्री-पुरुष किस तरह से आचरण करें।

14.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

तपन, मीनाक्षी (संपा) 1997, *एंबोडिमेंट: एसेज ऑन जेंडर एंड इक्वैलिटी*, नई दिल्ली, ऑक्सफर्ड यूनि. प्रेस

मैत्रेयी कृष्णराज और करुणा चानना (संपा) 1989, *जेंडर एंड द हाउसहोल्ड डोमेन: सोशल एंड कल्चरल डायमेंसंस*, नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशंस

फैथ, कार्लीन (1994) "रेजिस्टेंस: लेसंस फ्रॉम फॉकॉल्ट एंड फैमिनिज्म" (संपा.) एच. लॉरेन रैडके और एच.जे. स्टैम (संपा.) *पावर/जेंडर सोशल रिलेशंस इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस*, लंदन, सेज पब्लिकेशंस में

14.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) शरीर को लेकर जो जीव-वैज्ञानिक धारणा प्रचलित है वह स्त्री और पुरुष के बीच शारीरिक भेदों को बताती है। जैव नियतिवादी मानते हैं कि स्त्री और पुरुषों में विद्यमान आचरण संबंधी भिन्नता और उसके फलस्वरूप लिंग भूमिकाओं की व्याख्या के मूल में शारीरिक भेद हैं। लेकिन समाजशास्त्रियों ने देह की जो धारणा बनाई है वह उसकी जैविक धारण से बिल्कुल विपरीत है। समाजशास्त्रियों के अनुसार देह संस्कृति का वाहक, उसका माध्यम है। प्रत्येक समाज के सांस्कृतिक नियम ही देह की धारण परिभाषित करते हैं और काफी हद तक सामाजिक लिंग सोच जन्य भूमिका और इससे संबंधित स्तरीकरण को ठोस स्वरूप प्रदान करते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) 5 (सभी)

2) 4 (2 वर्ष)

3) दृश्य और प्रकाशन दोनों ही माध्यम सामाजिक लिंग सोच जन्य पूर्वाग्रहों के मुख्य स्रोत हैं और इनके जरिए प्रचारित रूढ़िप्ररूप आदर्श व्यक्तित्वों (स्टीरियोटाइप रोल मॉडल) से सामाजिक लिंग सोच जन्य पहचान प्रभावित होती है। इसका सबसे उपयुक्त उदाहरण 'पूर्ण' या 'वांछनीय' देह के रूप में नारी देह की छवि का शक्तिशाली केबल टेलीविजन और पत्र-पत्रिकाओं समेत विभिन्न संचार माध्यमों से प्रचार है।